वर्ष 34 अंक 1 जुलाई 2019 - जनवरी 2020

बुद्धिवादी

बुद्धिवादी, मानवतावाद, निरीश्वरवाद और धर्मनिरपेक्षता के प्रसार के लिए
बुद्धिवादी फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित पत्रिका

इस अंक में

नागरिकता संशोधन कानून(CAA) का विरोध क्यों? 1

- NPR का बहिष्कार क्यों? 2
- जनतंत्र समाज, बिहार, का प्रांतीय सम्मेलन 4
- डॉ रमेन्द्र की किताब 'शराब, सेक्स और नीतिशास्त्र' का अंश 4
- बाबरी मस्ज़िद-रामजन्मभूमि पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय का लखनऊ के जनजीवन पर प्रभाव 5

जेन्डर समानता का पहला कदम : सही सवाल उठाना 6

- मूल्यहीन 6
- जेन्डर समानता पर डॉ० आम्बेडकर के विचार 8
- स्त्रियाँ इतिहास के आईने में 10
- कमला भसीन: अहम बातें 10

सम्पादक मंडल
डॉ. रमेंद्र
डॉ. कवलजीत कौर
डॉ किरण

सम्पादकीय सहायक
प्रिया नाथ
शीबा नाज़
ललित

216 -ए, श्रीकृष्णपुरी, पटना 800001
Email: dr.ramendra.nath@gmail.com
kawaljeetkaur.patna@gmail.com

Visit the Facebook Page of
Buddhiwadi Foundation

नागरिकता संशोधन कानून(CAA) का विरोध क्यों?

डॉ. रमेन्द्र

संक्षेप में, नागरिकता संशोधन कानून का विरोध इसलिए, क्योंकि:

1- यह धर्मनिरपेक्षता के विरुद्ध है।
2- यह समानता के मौलिक अधिकार के विरुद्ध है।
3- यह मानव अधिकारों का उल्लंघन है।

लेकिन, ऐसा क्यों है, यह समझने के लिए, पहले यह जानना ज़रूरी है कि नागरिकता संशोधन कानून है क्या?

नागरिकता संशोधन कानून

12 दिसम्बर, 2019, को भारत के राजपत्र में प्रकाशित जानकारी के अनुसार, नागरिकता संशोधन कानून के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं:

1) 31 दिसम्बर, 2014, से पहले अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान से भारत में आने वाले हिन्दू, सिक्ख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई समुदाय के लोगों को अवैध अप्रवासी -- मोदी सरकार की शब्दावली में ''घुसपैठिए'' -- नहीं माना जाएगा, बल्कि उन्हें भारत की नागरिकता प्रदान कर दी जाएगी।

2) संविधान के छठे शेड्युल में शामिल असम, मेघालय, मिजोरम और त्रिपुरा के आदिवासी क्षेत्र तथा बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन, 1873, द्वारा अधिसूचित ''दि इनर लाइन'' में आने वाले क्षेत्र इस संशोधन के दायरे से बाहर रहेंगे।

विरोध क्यों?

इस कानून के विरोध का सबसे बड़ा आधार यह है कि - जैसा कि भारत के संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है--भारत एक धर्मनिरपेक्ष (secular) राज्य है। भारत के सुप्रीम कोर्ट ने भी यह माना है कि धर्मनिरपेक्षता भारतीय संविधान के ''बुनियादी ढ़ांचे'' का एक अंग है, और इसे भारत की संसद भी बदल नहीं सकती है। भारत के संविधान में किसी भी धर्म को सरकारी धर्म के रूप में मान्यता नहीं दी गयी है। इसके अलावा, समता के मौलिक अधिकार के अंतगर्त यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अन्य बातों के अलावा, राज्य नागरिकों के बीच धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा (धारा 15)। इसी तरह, संविधान की धारा 14 (कानून के समक्ष समता) के अनुसार, राज्य भारत के क्षेत्र के अंतगर्त किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समता या कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

CAA के अंतर्गत न सिर्फ धर्म को नागरिकता प्रदान करने का आधार बनाया गया है, बल्कि भारत के सबसे बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक समूह (मुस्लिम) को इसके दायरे से बाहर रखा गया है, जो कि सरासर अनुचित और असंवैधानिक है।

जहां तक मानवाधिकार का प्रश्न है, तो संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग की प्रमुख, मिशेल बैचलेट, पहले ही यह चिंता ज़ाहिर कर चुकी हैं कि CAA "मौलिक रूप से भेदभावपूर्ण" है। उनके अनुसार, यह कानून न सिर्फ़ भारत के संविधान के, बल्कि भारत के अंतरराष्ट्रीय मानव अधिकारों में प्रतिबद्धता के भी विरुद्ध है। उन्होंने उम्मीद जताई है कि भारत की सुप्रीम कोर्ट इस बात पर विचार करेगी कि यह कानून भारत के अंतरराष्ट्रीय मानव अधिकारों में प्रतिबद्धता के कहां तक अनुरूप है।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि जब भारत की अर्थव्यवस्था नोटबंदी और जी.एस.टी. जैसी मोदी सरकार की मेहरबानियों के कारण चरमरा रही है, सकल घरेलू उत्पाद जमीन की ओर लुढ़क रही है, लोगों के रोजगार छिन रहे हैं, महंगाई आसमान छू रही है -- मोदी सरकार को नागरिकता कानून के साथ छेड़-छाड़ करने की ज़रूरत क्या आ पड़ी थी?

ऐसा लगता है कि इसके पीछे असम में NRC लागू किए जाने के परिणाम हैं। वहां 19 लाख लोगों की नागरिकता पर प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है, जिनमें से विशाल बहुमत गैरमुसलमानों का है। अब, अगर CAA और NRC को जोड़ कर देखा जाए, तो इसका परिणाम यह होगा कि 31 दिसम्बर, 2014, से पहले भारत में प्रवेश करने वाले अन्य धार्मिक समूह के लागों को तो भारत की नागरिकता प्रदान कर दी जाएगी, सिर्फ़ मुसलमानें को "डिटेन्शन सेन्टर" में भेज दिया जाएगा, जिसमें कई गरीब भारतीय मुसलमान भी शामिल होंगे। दरअसल, असम में NRC की असली मार गरीबों पर पड़ी है, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, जो दस्तावेज़ों के अभाव में अपनी नागरिकता प्रमाणित नहीं कर पा रहे हैं। NRC के साथ मिला कर CAA बहुत ही खतरनाक है। यह फ़ासिस्ट हिटलर द्वारा जर्मनी में जैसा व्यवहार यहुदियों के साथ किया गया था -- वैसा ही व्यवहार भारत के हिटलर-प्रेमी, फ़ासिस्ट "हिन्दू राष्ट्रवादियों" द्वारा भारत के मुसलमानों के साथ करने की तैयारी है। लेकिन, वास्तव में इसका शिकार भारत की गरीब जनता होगी, चाहे वह किसी भी धार्मिक या गैरधार्मिक समूह से हो।

इसलिए, यह सवाल हिन्दू और मुसलमान का नहीं है, बल्कि भारत के धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक संविधान की रक्षा का है।

भारत के सभी नागरिकों को, जो धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र का समर्थन करते हैं, एकजुट हो कर शांतिमय और सविनय अवज्ञा सहित लोकतांत्रिक तरीकों से CAA का विरोध जारी रखना होगा, और मोदी सरकार के हिटलरशाही मंसूबों को परास्त करना होगा।

NPR का बहिष्कार क्यों?

डॉ. रमेन्द्र

NPR (नैशनल पाप्युलेशन रजिस्टर) का विरोध और बहिष्कार इसलिए, क्योंकि यह NRC (नैशनल रजिस्टर ऑफ सिटिजन्स) लागू किए जाने की दिशा में पहला कदम है।

NRC

असम में NRC लागू किए जाने के दुष्परिणाम हमारे सामने हैं। वहां 19 लाख लोगों की नागरिकता पर प्रश्न-चिन्ह लग गया है। इनमें से कइयों को "डिटेन्शन

सेन्टर" में भेज दिया गया, जहां कुछ लोगों की मौत भी हो चुकी है। अगर सारे भारत में NRC को लागू किया गया, तो इसका परिणाम क्या होगा, इसे हम असम के उदाहरण से समझ सकते हैं।

सारे देश में CAA (नागरिकता संशोधन कानून) NRC और NPR के व्यापक जन-विरोध के बाद, अब प्रधानमंत्री या गृहमंत्री जो भी कहें; वास्तविकता तो यह है कि गृहमंत्री, अमित शाह, संसद के अंदर और बाहर बड़े भड़काऊ ढ़ंग से सारे देश में NRC लागू करने और ''घुसपैठियों'' को देश से बाहर ''खदेड़ने'' की बात कर चुके हैं।

दिल्ली विधान सभा चुनाव के पहले प्रधानमंत्री, नरेन्द्र मोदी, ने दिल्ली में एक रैली में यहां तक कह दिया कि उनकी सरकार में NRC पर कोई चर्चा ही नहीं हुई है, और यह भी दावा किया कि देश में एक भी ''डिटेन्शन सेन्टर'' नहीं है! (दोनों ही बातें गलत हैं।) दूसरी ओर, कुछ ही दिनों बाद उनकी कैबिनेट ने NPR के लिए करोड़ों रुपयों की राशि को मंजूरी दे दी।

NPR

पहले मोदी सरकार द्वारा कहा जा रहा था कि NPR देश में NRC लागू करने का "पहला कदम" है। अब कहा जा रहा है कि NPR का NRC से कोई सम्बंध नहीं है। यह भी कहा जा रहा है कि इसमें नागरिकों से सिर्फ़ जानकारी मांगी जाएगी, कोई कागज़ात नहीं मांगें जाएंगे। गृहमंत्री, अमित शाह, ने तो 12 मार्च, 2020, को राज्य सभा में यह भी कह दिया है कि किसी भी नागरिक को "डाउटफुल" (संदेहास्पद) की श्रेणी में नहीं डाला जाएगा।

सवाल यह कि नए NPR में नागरिको के माता-पिता के जन्म-सम्बंधी जानकारी क्यों मांगी जा रही है? "उनका जन्म कहां हुआ? अगर भारत में, तो किस प्रान्त में? विदेश में, तो किस देश में? उनकी मातृभाषा क्या है?" इत्यादि।

वाजपेयी सरकार द्वारा 2003 में नागरिकता कानून में संशोधन किया गया था, जिसके अनुसार, NPR द्वारा प्राप्त जानकारी का सत्यापन किया जाएगा, और संदेहास्पद जानकारी वालों को "डाउटफुल" की श्रेणी में डाल दिया जाएगा। फिर, यह NRC का आधार बनेगी।

क्या मोदी सरकार नागरिकता सम्बंधी 2003 के नियमों में, अमित शाह द्वारा राज्य सभा में दिए गए आश्वासन के अनुरूप संशोधन लाएगी? (इसके बिना यह आश्वासन बेकार है।)

सेन्सस ऑफ इंडिया के बेबसाइट पर अभी भी यह कहा जा रहा है कि NPR पहला कदम है, NRC की ओर।

17 मार्च, 2020, केन्द्र सरकार ने CAA की संवैधानिक वैधता सम्बंधी मामले में, सुप्रीम कोर्ट में एफिडेविट कर के कहा है कि NRC नागरिकों और गैरनागरिकों के बीच अंतर करने के लिए किसी भी सम्प्रभू देश के लिए एक अनिवार्यता है।

सवाल यह भी है कि इन मुद्दों पर अपनी सुविधा के अनुसार बयान बदलते रहने वाली सरकार पर कोई भरोसा भी कैसे करे?

सबसे बड़ा सवाल तो यह है कि अगर NPR, NRC लागू किए जाने की दिशा में पहला कदम नहीं है, तो फिर इसकी ज़रूरत ही क्या है? सरकार क्यों चरमराती अर्थव्यवस्था वाले एक गरीब देश के करोड़ों रूपए इसमें बर्बाद कर रही है? क्यों नागरिकों को बेवजह परेशान किया जाएगा? सरकार सामान्य रूप से सेन्सस का काम क्यों नहीं करती है?

यह सोचना बहुत बड़ी भूल है कि NRC का असर सिर्फ़ भारतीय मुसलमानों पर पड़ेगा। इसका असर अधिकांश आबादी पर पड़ेगा, जिनमें गरीब, आदिवासी, दलित, अन्य पिछड़ी जाति के लोग, महिलाएं और धार्मिक अल्पसंख्यक शामिल होंगे। असम में जिन 19 लाख लोगों को ''गैरनागरिक'' घोषित किया गया है, उनमें से सिर्फ़ 4 लाख मुसलमान हैं।

इसलिए, जनतंत्र समाज (Citizens for Democracy-CFD) ने NRC के बहिष्कार के लिए अभियान चलाने का निर्णय लिया है। इसके लिए, हम सविनय अवज्ञा सहित सभी शान्तिमय लोकतांत्रिक तरीकों का इस्तेमाल करेंगे।

हम भारत के सभी नागरिकों से अपील करते हैं कि वे NPR का बहिष्कार करें। इससे सम्बन्धित किसी भी फॉर्म को न भरें, किसी भी सवाल का जवाब न दें।

जनतंत्र समाज, बिहार, का प्रांतीय सम्मेलन

जनतंत्र समाज (Citizen for Democracy-CFD), बिहार, का एक दिवसीय प्रांतीय सम्मेलन 8 दिसम्बर, 2019, को पटना के गाँधी संग्राहलय में आयोजित किया गया।

मुख्य वक्ता के रूप में जनतंत्र समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष, एस० आर० हिरेमठ, शामिल हुए, जबकि अध्यक्षता जनतंत्र समाज, बिहार, के अध्यक्ष, डॉ० रमेंद्र, ने की।

एस० आर० हिरेमठ ने बी० जे० पी०-आर० एस० एस० से लोकतंत्र के लिए खतरे के प्रति आगाह किया, और इसके विरुद्ध संघर्ष का आह्वान किया।

इसके आलावा, जगत भूषण, प्रभाकर कुमार, साजदा खातून, उमेश, सुवाष चंद्र, बम बम सिंह, सागर और प्रभात कुमार ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

डॉ किरन नाथ दत्ता ने सी० ए० ए० (नागरिकता संशोधन कानून) और एन० आर० सी० के विरोध का प्रस्ताव रखा, जिसे स्वीकार कर लिया गया। इसके आलावा, "फेक एनकाउंटर" के विरुद्ध भी प्रस्ताव पारित किया गया।

सम्मलेन में विनोद रंजन, निर्मल चंद्र, प्रवीन कुमार मधु, शाहिद कमाल, पुतुल, धीरज कुमार निराला। सतीश कुमार, प्रिया नाथ, संजीव कुमार श्रीवास्तव, फा० जोन्स के, इरफान नूरी, अख्तरी बेगम, मनोज कुमार, ललित और रामशरण सहित लगभग सौ लोग शामिल हुए।

प्रथम सत्र में बी० जे० पी०-आर० एस० एस से धर्म - निरपेक्ष लोकतंत्र के लिए ख़तरे के अलावा चुनाव-सुधार पर भी विचार हुआ |

भोजन-अवकाश के बाद, कश्मीर के नाज़ुक हालात, और संगठनात्मक मुद्दों पर चर्चा हुई।

कश्मीर में अलोकतांत्रिक तरीके से लाये गए परिवर्तनों का जनतंत्र समाज ने विरोध किया, और फिर से पुरानी स्थिति बहाल करने की मांग की |

अध्यक्ष, डॉ० रमेंद्र, ने छात्र-युवा और महिलाओं को अधिक संख्या में जनतंत्र समाज से जोड़ने पर बल दिया।

डॉ रमेन्द्र की किताब 'शराब, सेक्स और नीतिशास्त्र'का अंश :

पूर्ण शराबबंदी के पक्ष में सबसे सशक्त युक्ति

अब, हम पूर्ण शराबबंदी के पक्ष में दी जाने वाली सबसे सशक्त युक्ति पर आएं, जिसका कुछ ज़िक्र "शराब पी कर लोग अपनी पत्नी और बच्चों को पीटते हैं" के अंतर्गत भी हुआ है.हमने यह माना है कि हालांकि कुछ लोग शराब पीए बिना भी अपनी पत्नी-बच्चों को पीटते हैं, फिर भी, यह भी सच है कि कुछ लोग अधिक बुनियादी ज़रूरी काम के पैसे, जैसे, बच्चे के दूध, भोजन, दवा या स्कूल की फ़ीस के पैसे जबरदस्ती पत्नी, बच्चों से छीनते हैं, और छीनने की कोशिश में मारपीट करते हैं, और फिर शराब पीने के बाद भी गाली-गलौज और मार-पीट करते हैं. पूर्ण शराबबंदी के पक्ष में इसे एक युक्ति बनाया गया है. हमने पहले ही कहा है कि पारिवारिक हिंसा, चाहे शराब पी कर की जाए, या बिना शराब पीए, उस पर पहले से ही कानूनी रोक है. जो कोई भी पारिवारिक हिंसा करता है, उस पर कानूनी कार्यवाही होनी चाहिए. इसी तरह, शराब पीना उचित है या अनुचित - इस चर्चा के अंतर्गत हमने शराब की लत की भी चर्चा की है, और कहा है कि यह एक बीमारी है. जो इस रोग से ग्रस्त हैं, उनका इलाज होना चाहिए. ऊपर जो गलत हरकतें बतलायी गयीं हैं, वैसा करने वाले अक्सर वही होते हैं, जिन्हें शराब की लत बुरी तरह से लग चुकी होती है. ऐसे लोगों पर पारिवारिक हिंसा से सम्बंधित कानून के अंतर्गत कार्यवाही तो की ही जानी चाहिए, साथ में उनका इलाज़ भी किया जाना चाहिए. लेकिन, क्योंकि कुछ शराब पीने वाले अल्कोहलिक हो जाते हैं, हिंसा करते हैं, शराब पी कर गाड़ी चला कर सड़क-दुर्घटनाएँ करते हैं, इसलिए सारे शराब पीने वाले नागरिकों की आज़ादी छीन लेने का कोई नैतिक औचित्य नहीं है. यह उसी तरह है कि क्योंकि कुछ डायबिटिक लोगों के लिए चीनी लेना नुकसानदेह है, इसलिए सारे चीनी लेने वालों पर कानूनी रोक लगा दी जाए! ...

संक्षेप में, पूर्ण शराबबंदी के समर्थन में दी जाने वाली कोई भी युक्ति तार्किक दृष्टि से संतोषजनक नहीं है.

बाबरी मस्ज़िद-रामजन्मभूमि पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय का लखनऊ के जनजीवन पर प्रभाव

प्रो० साजदा खातून

(9 दिसंबर, 2019, को पटना विश्वविद्यालय के UGC द्वारा स्पॉन्सर्ड सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोशल एक्सक्लूशन एंड इंक्लुसिव पॉलिसी में दी गयी वार्ता पर आधारित)

8 नवम्बर, 2019, को जब यह बयान जारी हुआ कि 9 नवम्बर को बाबरी मस्ज़िद-रामजन्मभूमि मामले पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला आएगा, तो लखनऊ जनपद (जिले) के सभी स्कूल-कॉलेजों में छुट्टियाँ घोषित कर दी गयीं। लोगों में कुछ-कुछ दहशत का माहौल भी था। दुकानें रात 12:30 से 1 बजे तक खुली रहीं। लोग राशन, सब्ज़ियां, दूध, ब्रेड आदि खरीद कर स्टोर करने लगे। ऐसा माना जाने लगा कि कहीं कर्फ्यू ना लग जाये।

मेरी चिंता का विषय यह था कि मेरे घर राशन वगैरह कोई सामान नहीं था। हमने चिंतित हो कर कहा, "मेरा क्या होगा? हम क्या करेंगें?" इस पर बगल से आकांक्षा ने फ़ौरन कहा, "दीदी ! आप मुझसे ले लीजिएगा चिंता मत कीजिए।"

सामने वाले मिश्रा अंकल ने भी ऐसा ही आश्वासन दिया। उन्होंने यह भी कहा कि कोई गड़बड़ हो तो उन्हें फौरन कॉल करने।

स्कूल कॉलेज के इम्तहान और प्रैक्टिकल्स टाल दिए गए। कुछ बच्चे तो स्कूल पहुँच भी गए थे, उन्हें वापस भेज दिया गया। उस वक़्त शादियाँ चल रही थी। बहुत से लोगों की शादियाँ स्थगित कर देनी पड़ी। धारा 144 लागू होने के कारण लोग इकठ्ठा होने से बच रहे थे। मेरे जानने वालों में दो भाइयों का एक साथ वलीमा (निक़ाह के बाद दिया जाने वाला भोज) था, उसे रद्द करना पड़ा। एक लड़की की शादी के लिए तो स्पेशल परमिशन लेनी पड़ी, लेकिन मेहमान बहुत कम आए। जनपद के अंदर के लोगों में तो इतना अधिक असर नहीं था, लेकिन हमारे एरिया में ज़्यादा असर था। मेरी एक जानने वाली हैं। उनका ननिहाल अयोध्या में है। 1992 में उनकी मामी को ज़िंदा जला दिया गया था। 8 नवंबर को जब यह घोषणा हुई कि 9 नवंबर को बाबरी मस्ज़िद-रामजन्मभूमि मामले में सुप्रीम कोर्ट का फैसला आएगा, तो उनका परिवार अयोध्या छोड़ कर लखनऊ चला आया था।

आस-पड़ोस के सभी लोग टी.वी. के सामने बैठकर बस सुप्रीम कोर्ट के फैसले का इंतज़ार कर रहे थे। फैसला आने के बाद सबका यही कहना था कि "चलो झगड़े की एक वजह खत्म हुई। 8 नवंबर को ईद मिलादुन नबी का त्योहार था, वह भी लखनऊ में शांतिपूर्वक निबट गया।

कही से कोई अप्रिय घटना की जानकारी या सूचना नहीं थी। हालांकि स्कूल-कॉलेज खुलने के बाद भी विद्यार्थियों की उपस्थिति बहुत कम रही। लोग एहतियातन घर से बाहर निकलने से बच रहे थे। यहां तक कि दुकानें भी खुलने के बाद, बंद करा दी गयीं। फैसला आने के बाद अगले दिन जब हम अपने अब्बू को लेकर हॉस्पिटल गए, तो वहां भी काफ़ी कम ही लोग थे, जबकि आम तौर पर वहां बहुत भीड़ रहती है। सिविल हॉस्पिटल शहर के बीचो-बीच स्थित है, और मुख्यमंत्री आवास भी उसके करीब ही है। लोगो में एक अनकहा सा डर बैठा हुआ था।

फैसला आने के बाद, मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के सदस्य और बाबरी मस्जिद के पक्षधर, ज़फरयाब जीलानी, का बयान आया कि वे फैसले के "रिव्यु" के लिए सुप्रीम कोर्ट में पिटिशन दाखिल करेंगे। मैंने इसका विरोध किया, तो कुछ लोगों को बुरा लगा। यहाँ तक कि कुछ लोगों के फ़ोन भी आने लगे। तो फिर हमने उन्हें मिलने के लिए बुला कर, अपना विरोध जताया। हमने कुल मिला कर यह महसूस किया कि लोग अब धर्म के नाम पर और ज़्यादा झगड़ा-फ़साद नहीं चाहते हैं। लोग इन सब राजनीतिक रोटियाँ सेकने वालों की मानसिकता को समझने लगे हैं, और उनके बहकावे में नहीं आना चाहते। लोग साम्प्रदायिक सदभाव से रहना चाहते हैं, और ऐसे मुद्दो को हमेशा के लिए ख़त्म कर देना चाहते हैं।

जेन्डर समानता का पहला कदम : सही सवाल उठाना

डॉ० कवलजीत

सही और सटीक प्रश्न करना ज्ञान का एक मुख्य साधन है।

बचपन से ही हम सवाल पूछना शुरू कर देते हैं। इस प्रवृत्ति को हतोत्साहित कब और कैसे किया जाता है? घर और स्कूल दोनों ही प्रार्थना-पूजा के माध्यम से आस्था की अवधारणा की शुरुआत कर देते हैं। आस्था प्रश्न उठाने के विरुद्ध वह प्रवृत्ति है, जिसमें प्रमाण के होने या न होने पर भी हमें विश्वास करना सिखाया जाता है। धार्मिक के साथ-साथ सांस्कृतिक, सामाजिक मुद्दों को हमें उसके सही या गलत या क्यों होने पर विचार किये बिना स्वीकार करने पर बाध्य किया जाता है। कई बार तो किसी बात को मनवाने के लिए 'बड़ों का कहना है' यही युक्ति पर्याप्त होती है।

इस बात से हैरानी होती है कि हम अपने जीवन को जीते चले जाते हैं, और चिंतन-मनन भी नहीं करते कि आज हमारे समाज के सोच की जो दशा है, वह सामान्य तौर पर बिल्कुल ही असंतोषजनक है। समाज, वर्ग, जाति, लिंग के आधारों पर विभाजित है। समाज की आधी आबादी का पितृसत्तात्मक सत्ता की वजह से शोषण और उत्पीड़न हो रहा है।

आख़िर, आज भी 21वीं सदी में जब लड़कों के साथ लड़कियों की शिक्षा पर भी बल दिया जा रहा है, फिर भी महिलाओं की स्थिति पुरुषों की तुलना में शर्मनाक क्यों है? आश्चर्य है कि आज भी "घर का काम सबका काम" न मान कर बड़ी सहजता से घर का काम महिलाओं का काम माना जाता है। आम तौर से पुरूषों को 'रोटी कमाने वाला' और महिलाओं को 'घर संभालने वाली' माना जाता रहा है। आज भी जब महिलाएं भी 'रोटी कमाने वाली' बन जाती हैं, तब भी घर और घर के लोगों की देखभाल की ज़िम्मेवारी में पुरुषों की साझेदारी कम ही होती है। हंसी तो तब आती है जब पुरुष घर से जुड़ा कोई काम कर देते हैं तो महिलाओं पर एहसान जताते है; मानो गृहस्थी सँभालने की ज़िम्मेवारी के कॉन्ट्रैक्ट पर महिलाओं ने हस्ताक्षर किये हों।

मुख्य मुद्दा है कि समाज में जेंडर समानता लाना। मेरा मानना है कि समाज की आधी आबादी आज़ादी से, बराबरी, गरिमा, न्यायपूर्वक, खुशहाल जीवन जी सके, तो इसका सीधा असर समाज के हर क्षेत्र -- सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक -- पर पड़ेगा। युद्ध, हिंसा, शोषण, असंवेदनशीलता, गैरबराबरी से युक्त समाज में हर नागरिक की आज़ादी, समता, सुख, न्याय, गरिमा बुनियादी आवश्यकता है। अर्थात आज ज़बरदस्त सामाजिक परिवर्तन की ज़रूरत है। यह परिवर्तन कैसे होगा, कौन करेगा और कहाँ से शुरू होगा?

परिवर्तन शोषितों की आवश्यकता है, और वाहक उन्हें ही बनना होगा। जेंडर समानता लाने की ज़िम्मेवारी महिलाओं की है। फिर भी, समाज के रूढ़िबद्ध धारणा (stereotypes) विचारों से तो समझ में आता है कि जेन्डर समानता के अभाव से पुरुष भी कम त्रस्त नहीं हैं।

मूल्यहीन

अरुणा प्रसाद

बचपन से यह शब्द "मूल्यहीन" सुनती आयी हूँ| छुटपन में इसका अर्थ बहुत सीमित था| बिकाऊ वस्तुएं जिनकी कीमत बहुत ही कम या ना के बराबर हो, या बेकार वस्तुएं जिनकी उपयोगिता समय के साथ हमारे जीवन में ख़त्म हो गयी हो| पर जैसे-जैसे बड़ी हुई, अध्ययन और अनुभव से समझा कि इस शब्द का मतलब तो असीमित है| ये ना सिर्फ़ निर्जीव बिकाऊ वस्तुओं पर सही बैठती है, बल्कि ये इंसानो पर, उनकी भावनाओं पर, उनकी योग्यता पर और अनेक परिस्थितियों पर भी उतनी ही सही उतरती है| बड़े होने पर जब कुछ-कुछ समझ आया, तो लगा कि एक बड़े तबके के लिए मानव जीवन हमारे समाज में कितना कठिन और संघर्ष भरा है| वो तबका जो सम्पन्न व्यक्तियों के जीवन को आसान, सुखद, सुविधाजनक, सम्मानजनक बनाता है, वो खुद कितना कठिन, कष्टभरा और अपमानजनक जीवन बिताता है| मैंने देखा बचपन में नौकर ने आवाज़ देने पर आने में देर की, तो पिट गया| कभी कुछ अपने लिए बोल गया, तो इतनी हिम्मत जबाँदराज़ी करता है, पिट गया| रिक्शावाले ने कम किराया देने पर एतराज़ किया, तो पिट गया| यहां तक कि रिक्शेवाले ने कहीं ले

जाने से मना किया तो गाली की बौछार के साथ, उसे सवारी को उस दिशा में ले जाने को मजबूर होना पड़ा, जिधर वह जाना नहीं चाहता था|
ऐसी न जाने कितनी घटनाएं हैं| तब मन ने कहा ये मूल्यहीन अभागे लोग हैं|
पर विडंबना देखिये!

कितनी हैरानी हुई ये देखकर कि इन मूल्यहीनों के जीवन में भी इनसे अधिक मूल्यहीन प्राणी भी हैं, और वो हैं इनकी माताएं, बहनें, बीवियां, बेटियां!
घर जाकर ये लोग अपना सारा गुस्सा, आक्रोश, विवशता सब इन पर निकालते हैं| सारे दिन श्रम कर, थक कर ये घर लौटे हैं| थकान मिटाने के लिए, अपनी कमाई का बड़ा हिस्सा देसी शराब को भेंट चढ़ा आए हैं, घर की औरतों पर अब रोब झाड़ना, खाना मन का नहीं है, बीवी पर गालिओं की बौछार, बीवी ने पैसे मांगे तो उनकी शामत| गाली के साथ अच्छे से मारकुटाई की जाती है| ये औरतें भी कमाती हैं, और सब घर का काम भी संभालती हैं| घर का मर्द घर का काम करना अपनी तौहीन समझता है| अपने कमाए पैसे पर तो उसका अधिकार है ही; बीवी-बेटी की कमाई का भी वह हक़दार है| औरतें अपने कमाए पैसे अपने मन से ख़र्च भी नहीं कर पाती हैं| ये तो कुछ घटनाएं हैं | इस विषय पर तो पोथी तैयार हो जाये|
अब इसका दूसरा पहलू हमारे समाज के सभ्य, सुसंस्कृत, पढ़े-लिखे लोग| समाज के विकास के लिए सदा प्रयत्नशील रहने वाले लोग| मानव-उत्थान पर बड़े-बड़े भाषण देने वाले अपने-आप को प्रगतिशील बताने वाले लोग| हालात यहाँ भी कमोबेश वही है| आज की औरतें पुरानी रूढ़िवादी विचारों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठा रही हैं| वो अपने पैरों पर खड़ी हैं| पर सब कुछ होने के बाद मर्द और औरत काम कर के दोनों ही थके आते हैं| तब सारी बड़ी-बड़ी बातें धरी की धरी रह जाती हैं| घर के बाहर भले ही औरतें मर्द की बराबरी कर रही है, घर के अंदर कदम रखते ही एक मूल्यहीन सेवक हैं, जिनके कामों का, त्याग का कोई मूल्य नहीं है| उनके काम तो कर्तव्य की श्रेणी में आते हैं| किसी कारणवश अगर गृहणी ये काम नहीं कर पाती, तो उन कामों के लिए अच्छी तनख्वाह पर लोग रखे जाते हैं| जब तक गृहणी कर रही है, उसका किया काम किसी को लगता ही नहीं है कि वह कुछ कर रही है|

अब आते हैं अपने समाज के डबल स्टैण्डर्ड के मन को अंदर तक झकझोर देने वाली एक बात पर| मेरी रिश्तेदार बहन बैंक में अच्छे पोस्ट पर काम कर रही है| जब उसकी शादी की बात चली तो लड़का भी बैंक में अच्छे पोस्ट का मिला| दोनों की हैसियत लगभग बराबर की थी| पर मेरी बहन के लिए लोगों की नज़र में महत्व ही न था| उनसे कैश डिमांड किया गया|
मेरे मन में अनेकों बार ये सवाल कौंधा, अगर मेरी बहन लड़का होती, तो उसे भी लोग शादी के लिए कैश ऑफर करते| पर चूँकि वह लड़की है उसकी योग्यता का कोई मोल नहीं| अपनी योग्यता में वो भले लड़कों की बराबरी कर रही है, पर समाज में फिर भी लड़कों के बराबर नहीं है| दिन भर ऑफिस में बिताने के बाद घर आने पर घर के कामकाज सँभालने की ज़िम्मेदारी से भी वह बच नहीं पाती| जबकि पति ने यदि यदा-कदा हाथ बंटा दिया, तो यह जताना नहीं भूला कि तुम पर एहसान किया है, वर्ना यह ज़िम्मेदारी मेरी नहीं है|
हमें इस सोच को बदलना होगा| घर तो घर में रहने वाले हर सदस्य का है| ये समझना कि घर का काम करना लड़कों के लिए हास्यास्पद है या अपमानजनक है, गलत है| इस तरह की सोच गलत है| मैंने बहुत घरों में देखा-सुना है लड़के घर के काम में सहयोग करें, तो उन्हें "बीवी का गुलाम" कह कर मज़ाक बनाया जाता है, और हतोत्साहित किया जाता है|
लड़के बचपन से ऐसे नहीं होते| इस तरह की सोच का बीज घर के बड़े ही बच्चों में डालते हैं| बचपन में माँ-बहनों को काम करता देख बड़े उत्साह से उनका हाथ बटांने, उन से सीखने आते हैं, पर उन्हें घर के बड़ों द्वारा यह कह के रोक दिया जाता है कि "अरे तुम यह क्या कर रहे हो, लड़की हो क्या?" इस तरह या फिर "यह तुम्हारा नहीं लड़कियों का काम है" कह कर उन्हें उस काम से रोक कर लड़कियों को अढ़ा दिया जाता है| पति और पत्नी इस तरह से बचपन से ही अपने बच्चों को गलत संस्कार देते हैं| इस मामले में घर के बुजुर्ग और व्यस्क सदस्यों को जागरूक होने और विचार करने की आवश्यकता है| ये उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे बचपन से अपनी संतान को सही सोच-विचार, समझ दें| तब हमारे समाज में आई विषमताएं दूर होगी और हम प्रगतिशील उन्नत समाज के निर्माण में सहयोग दे पाएंगे|

जेन्डर समानता पर डॉ० आम्बेडकर के विचार

डॉ० कवलजीत

डॉ० आम्बेडकर दलितों के मसीहा, संविधान के मुख्य वास्तुकार तो हैं ही, इसके साथ साथ वे सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति के मार्गदर्शक रहे हैं| उनका यह मानना था कि "किसी समुदाय की प्रगति महिलाओं की प्रगति से आंकी जाती है|" उन्होंने अपने सभी संघर्षों के कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की|

हमारा समाज पितृसत्तात्मक समाज है| यह एक ग्लोबल मुद्दा है| इसमें पुरूषों को उत्तम और नारियों को निम्नतर रूप में आंका जाता है| परन्तु हमारे भारत में, हिन्दू बहुल देश होने के कारण, पितृसत्तात्मक समाज के साथ-साथ ब्राह्मणवादी व्यवस्था है| इसकी स्पष्ट झलक जाति के रूप में देखी जा सकती है|

भारतीय सन्दर्भ में जाति, वर्ग और जेन्डर के स्तर पर मौजूद असमानताओं और उनमे सुधार के मुद्दों पर डॉ० आम्बेडकर का चिंतन तार्किक और कारगर लगता है| उन्होंने जाति-प्रथा और महिला समस्या को जोड़ कर देखा है| महिलाओं की एकजुटता में जाति आड़े आती है| वैसे तो, आज भी समाज में महिलाओं की अपमानजनक और अन्यायपूर्ण स्थिति उनके साथ घटी सेक्सुअल और आक्रामक घटनाओं से सामने आती है| लेकिन,आम तौर से दलित महिलाओं के विरुद्ध इस तरह की घटनाओं की संख्या अधिक और वीभत्स होती हैं| यह समझा जा सकता है कि "दलित" महिलाओं की स्थिति तथाकथित "सवर्ण" महिलाओं की तुलना में बदतर है|

हम सब यह जानते हैं कि डॉ० आम्बेडकर के प्रेरणा-स्रोत भारतीय महिलाओं की शिक्षा-क्रांति के अग्रदूत, जोतिराव फुले और सावित्री फुले, रहे| डॉ० आम्बेडकर ने स्त्रियों की आज़ादी को समाज की प्रगति के लिए पहली शर्त माना, और इसका आधार शिक्षा को घोषित किया| उनका मानना था कि नारी शिक्षा पुरुष शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण है| वे यह मानते थे कि पूरी पारिवारिक व्यवस्था की धुरी नारी है, और इसे नकारा नहीं जा सकता| हम डॉ० आम्बेडकर के जेन्डर समानता के विचारों को उनके द्वारा किये गए सत्याग्रहों के माध्यम से भी समझ सकते हैं| साथ ही, उनके द्वारा प्रकाशित जनवरी, 1920, में "मूकनायक" और 1927 में प्रकाशित "बहिष्कृत-भारत" में भी जेन्डर समानता से सम्बंधित लेख लिखे गए|

20 मार्च, 1927, को महाद सत्याग्रह में महिलाओं की भागीदारी काफ़ी संख्या में थी| डॉ० आम्बेडकर ने महिलाओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि -- "तुम्हारी कोख़ से जन्म लेना गुनाह क्यों माना जाए और ब्राह्मण स्त्रियों की कोख़ से जन्म लेना पुण्य क्यों माना जाए? अपने को अछुत मत समझो| स्वच्छ जीवन जियो| सवर्ण महिलाओं की तरह कपड़े पहनो| यह मत देखो कि तुम्हारे कपड़ो में जगह-जगह पैबंद लगे हैं, बस यह देखो कि साफ़ हैं|"

इसके बाद, 25 दिसंबर, 1927, को 'मनुस्मृति' को सार्वजनिक रूप से जलाने का कार्यक्रम हुआ| डॉ० आम्बेडकर ने अपने एक लेख 'The women and the counter revolution' (नारी और प्रतिक्रांति) में कहा कि "कहा जा सकता है कि मनु शूद्रों के प्रति जितना अनुदार था, स्त्रियों के प्रति उसके विचार उतने ही अनुदार थे|"

मनुवादी संस्कृति नारियों के अपमान और अन्याय की पराकाष्ठा थी| 'मनुस्मृति' ने यह माना कि स्त्री स्वतंत्र होने लायक नहीं|

डॉ० आम्बेडकर का यह स्पष्ट विचार था कि स्त्री को पुरुष के समान अधिकार, परिवार और समाज में बराबरी का दर्जा मिलना चाहिए| उनका मानना था कि शिक्षा और आर्थिक तरक्की नारियों के इस काम में मदद करेगी|

आगे, 1942 में डॉ० आम्बेडकर ने वायसराय की कार्यकारी परिषद में श्रम सदस्य रहते हुए पहली बार, महिलाओं के लिए प्रसूति अवकाश (maternity leave) की व्यवस्था की|

अब, 26 जनवरी, 1950, से लागू संविधान पर गौर करें| मेरी समझ से यह कहा जा सकता है कि जो व्यक्ति भारत के संविधान के महत्त्व को समझते हैं, वे जेन्डर समानता के पक्षधर हैं| संविधान सभा के ड्राफ्टिंग कमिटि का नेतृत्व करते हुए डॉ० आम्बेडकर ने स्वतंत्रता, समता और बंधुता के मूल्यों को स्थापित कर महिलाओं के अधिकारों को ठोस कानूनी रूप दिया| देश की आधी आबादी की गरिमा कायम की| दुनिया के कई देशों में महिलाओं को मताधिकार के लिए आंदोलन करने पड़े| हम भारतीय महिलाओं को अपने

संविधान के द्वारा मताधिकार मिला| हमारा संविधान पितृसत्तात्मक सत्ता के विरुद्ध एक दमदार दस्तावेज़ है|

भारत के संविधान के उद्देशिका (preamble); मूल अधिकार (fundamental rights), मूल कर्तव्य (fundamental duties), निर्देशक सिद्धांत (directive principles) में जेंडर समानता का उल्लेख है|

हमारे संवैधानिक विशेषाधिकार :

समता का अधिकार

1) आर्टिकल 14 – विधि के समक्ष समता

2) आर्टिकल 15 – धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध

3) आर्टिकल 15(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी|

4) आर्टिकल 16 – लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता

5) आर्टिकल 39(a) – पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हों;

6) आर्टिकल 39(d) – पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हों;

7) आर्टिकल 42 – काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध|

8) आर्टिकल 51(A)(e) (भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हों;) ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं;

इसके अलावा, पंचायत और नगरपालिकाओं में महिला आरक्षण के अधिकारों, आर्टिकल 243 (D) 3, 243 (D) 4, 243 T (3), 243 T (4) को भी सम्मिलित किया गया है|

अब, हिन्दू कोड बिल पर गौर करें :

अधिकांश भारतीय महिलाओं के सशक्तिकरण का असली दस्तावेज़ हिन्दू कोड बिल है| हम जानते हैं कि डॉ० आम्बेडकर का विश्वास समतावादी समाज में था| उन्होंने स्वंय कहा कि "मुझे भारतीय संविधान के निर्माण से ज़्यादा दिलचस्पी और ख़ुशी हिन्दू कोड बिल पास कराने से मिलेगी|"

5 फ़रवरी, 1951, को यह बिल संसद में पेश किया गया| यह बिल हिन्दू स्त्रियों की उन्नति के लिए प्रस्तुत किया गया था| सिक्ख, जैन और बौद्ध धर्म मानने वालों को भी इसकी परिधि में लाया गया|

दुःखद बात यह रही कि इस बिल को 26 सितंबर, 1951, को वापस ले लिया गया| इसके विरोध में डॉ० आम्बेडकर ने 27 सितम्बर, 1951, को कानून मंत्री के पद से इस्तीफ़ा दे दिया| महत्वपूर्ण बात यह रही कि बाद में हिन्दू कोड बिल के प्रभाव से महिलाओं के हक़ में कई अधिनियम पारित हुए|

महिलाओं को तलाक़ का अधिकार, गुजाराभत्ता मिलने का अधिकार, बाप-दादा की संपत्ति में हिन्दू विधवाओं और लड़कियों को पुत्र के बराबर की हिस्सेदारी, पुरुषों को सिर्फ़ एक जीवन साथी रखने की छूट का प्रावधान रखा गया| साथ ही, महिलाओं को अपनी कमाई पर अधिकार, अंतर्जातीय विवाह का अधिकार, महिलाओं को अपना उत्तराधिकारी निश्चित करने का अधिकार, इत्यादि का प्रावधान रखते हुए अधिनियम पारित किए गए|

हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि डॉ० आम्बेडकर द्वारा तैयार किया गया हिन्दू कोड बिल को सही मायने में सोशल इंजिनीरिंग का एक सशक्त औज़ार माना जा सकता है| यह एक क्रांतिकारी कदम रहा|

डॉ० आम्बेडकर ने महिलाओं को आत्मविश्वास के साथ शिक्षित होने, संगठित होने और आन्दोलन करने का आह्वान किया|

उन्होंने महिलाओं को सार्वजनिक भूमिका निभाने और न्यायपूर्ण और गरिमापूर्ण तरीके से लोकतांत्रिक समाज के निर्माता के रूप में लाने का प्रयत्न किया|

उन्होंने कहा कि :

Unity is meaningless without the accompaniment of women, education is fruitless without educated women. Agitation is incomplete without the strength of women.

इतिहास गवाह है

स्त्रियाँ इतिहास के आईने में

डॉ किरण

कई वरिष्ठ महिला इतिहासकार अब स्त्रियों के परिपेक्ष में इतिहास लिखने की पहल कर रही हैं, जो एक अच्छी पहल है। अब तक राजनीतिक इतिहास प्रमुखता से लिखा गया और पढ़ाया गया, बाद में मानव सभ्यता और संस्कृति का इतिहासकारों ने अध्ययन आरम्भ किया। इसमें स्त्रियों की दशा या दुर्दशा का कहीं-कहीं दूसरे सन्दर्भ में विवरण मिल जाता है; अब उन्हीं बिखरे श्रोतों से हमें स्त्रियों के परिपेक्ष्य में इतिहास लिखने की आवश्यकता है।

सबसे पहले वैदिक युग को ही लेते हैं, जिस काल के लिए बढ़ चढ़कर यह दावा किया जाता है कि महिलायें इस युग में स्वतंत्र थी, पर्दा नहीं करती थी, मंत्रो की रचना करती थी, अपने मर्ज़ी से स्वयंवर रचा सकती थी। आज हिन्दुओं की मानसिकता स्त्रियों के प्रति जो है, वह सब क्या वैदिक युग की ही परम्परा और प्रथाओं से नहीं बना है? वर्ण-व्यवस्था में स्त्रियां अवर्ण हैं, उन्हें धन समझा गया इन्सान नहीं, 'मनुस्मृति' में उनके लिए जो कहा गया वह सर्वविदित है। शूद्र से भी नीचे उन्हें अधिकार दिया गया, बल्कि कोई अधिकार ही नहीं दिया गया।

अब ऐतिहासिक विवरणों से उनकी अवस्था को देखने की कोशिश करें। जब कोई राजा आक्रमण कर दूसरे राज्य को जीत लेता था, तो उसे राज्य के धन्य धान्य के साथ रथ भर-भर कर स्त्रियां भी भेंट की जाती थीं। अपहरण और बलात्कार की घटनायें भी खूब होती थीं। सीता का अपहरण कर लिया गया और अर्जुन ने कृष्ण के बहन का अपहरण करके गन्धर्व विवाह किया। द्रौपदी को पाँचों भाइयों की पत्नी बना दिया गया। नियोग जैसी प्रथा भी थी, जिसमें औरतों का पति न होने पर देवर या अन्य के द्वारा संतानोत्पत्ति करवाई जाती थी। हर शहर में एक गणिका चुनी जाती थी, यानी उनसे वेश्यावृति करवाई जाती थी। कुछ विवरण हमें जातक और थेरीगाथा में भी मिलेंगे। वैदिक और बुद्धकालीन भारतीय समाज पृथक नहीं एक था। दास-दासियों की प्रथा थी, बेचीं और खरीदी जाती थीं। पट्टाचारा श्रेष्ठि पुत्री ने एक दास से अपनी मर्ज़ी से विवाह कर लिया, जिसकी सज़ा में उसे नगर से बहिष्कृत कर दिया गया। उसे जंगल में रहना पड़ा जहाँ उसके पति की सांप काटने से, और बेटों का नदी पार करते समय डूबकर मौत हो गयी। वापिस घर आयी तो पता चला की माँ-बाप के सहित उसके घर को जला दिया गया। वह पागल होकर सड़कों पर घूमने लगी, जब बुद्ध ने देखा तो उसे संघ के शरण में लिया। तो यह थी अपनी मर्ज़ी से दूसरी जाति में विवाह करने की सज़ा।

इतने संक्षिप्त लेख में स्त्रियों की दशा का पूरा इतिहास तो नहीं समेटा जा सकता है। लेकिन स्त्री-विमर्श पर लिखने वाली महिलाओं के लिए इतिहास में विवरणों की कमी नहीं है। ज़रूरत है उन्हें प्रकाश में लाने की।

मेरी कोशिश रहेगी कि 'बुद्धिवादी' पत्रिका में छपने वाली "इतिहास गवाह है" की सीरीज़ में, मैं कालानुक्रम अनुसार स्त्रियों से सम्बंधित इन विवरणों-कहानियों को उपलब्ध कराऊँ।

कमला भसीन: अहम बातें

संविधान ने सालों पहले कह दिया था कि औरत और मर्द बराबर हैं, पर समाज को अब तक यह समझ नहीं आया।

औरत पर हाथ उठाने वाला मर्द , इंसान कहलाने के लायक भी नहीं होता।

नारीवादी
गणित है न्यारा
एक और एक हो जाते ग्यारह

बेटी दिल में,
बेटी विल में

अक्षर तो क्या अब हम दुनिया पढ़ेंगे
क़िस्मत हमारी अब खुद लिखेंगे

गर जोर है अपने बाहों में
तो हालात बदलना मुमकिन है

सहना नहीं,
कहना सीखो